NAME OF THE NEWS PAPER दैनिक जागरण DATE: 22 JUN 2012

# चयन में पक्षपात की प्रवृत्ति

## चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति प्रक्रिया में बदलाव के सुझाव की अनदेखी पर निराशा जता रहे हैं ए. सूर्यप्रकाश

शासन के मानदंडों को ताक पर रखने की कांग्रेस की पुरानी आदत से सभी परिचित हैं। इसीलिए मुख्य चुनाव आयुक्त और चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति के लिए एक समिति (कोलेजियम) बनाने के लालकृष्ण आडवाणी के सुझाव पर मनमोहन सिंह सरकार की उपेक्षापूर्ण प्रतिक्रिया पर कोई हैरानी नहीं हुई। आडवाणी ने पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त एसवाई कुरैशी के उत्तराधिकारी की तैनाती के लिए कोलेजियम बनाने का सुझाव दिया था, लेकिन सरकार ने इस सुझाव को दरकिनार करते हुए वीएस संपत को मुख्य चुनाव आयुक्त नियुक्त करने की घोषणा कर दी। संपत में चुनाव आयुक्त बनने की तमाम योग्यताएं हो सकती हैं, किंतु अतीत में चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति में पक्षपात के अनेक उदाहरणों को देखते हुए सर्वाधिक योग्य दिखने वाले व्यक्ति की भी काबिलियत पर सवालिया निशान लग जाता है। हमें नहीं भूलना चाहिए कि इसी सरकार ने नवीन चावला को चुनाव आयुक्त और फिर मुख्य चुनाव आयुक्त के रूप में नियुक्त किया था, जबकि वह लोकतंत्र के मूल मानदंडों पर भी खरे नहीं उतरते थे। वह सफलता की सीढ़ी इसलिए चढ़ते चले गए, क्योंकि नेहरू-गांधी परिवार के करीबी थे। आपातकाल के दौरान नवीन चावला दिल्ली के उपराज्यपाल के सचिव थे। तब उन्होंने तिहाड़ जेल के अधीक्षक को इंदिरा गांधी के राजनीतिक विरोधियों के लिए जेल में एस्बेस्टेस की शीट की छत वाली छोटी-छोटी कोठरियां बनाने का आदेश दिया था। जब जेलर ने उन्हें दिल्ली की गर्मी की याद दिलाते हुए कहा कि राजनीतिक कैदी इस गर्मी में एस्बेस्टस की शीट वाली कोठरियों में कैसे रह पाएंगे तो चावला ने जवाब दिया था-उन्हें भून दो। शाह आयोग ने आपातकाल के दौरान इंदिरा गांधी और चावला जैसे नौकरशाहों द्वारा लोकतंत्र और संवैधानिक मूल्यों पर किए जाने वाले हमलों की जांच के दौरान कहा था कि उनका आचरण दमनकारी और निर्दयी था।

ऐसा लगता है कि जस्टिस शाह को पूर्वाभास हो गया था कि एक दिन भारत में कोई ऐसी सरकार बन सकती है, जो चावला जैसे अधिकारी को महत्वपूर्ण संवैधानिक पदों पर बिठा सकती है। इस तरह की घटना को रोकने के लिए उन्होंने नवीन चावला को किसी भी ऐसे सार्वजनिक पद के लिए अयोग्य ठहरा दिया जो निष्पक्षता की मांग करता हो और जिससे जनसाधारण के हित जुड़े हों। इसके बावजूद संप्रग-1 सरकार ने 2005 में नवीन चावला को चुनाव आयुक्त नियुक्त कर दिया। यही कारण है कि लालकृष्ण आडवाणी ने प्रधानमंत्री के नाम अपने पत्र में लिखा कि कुछ साल पहले संदेहास्पद नियुक्तियों के कारण व्यवस्था की विश्वसनीयता पर चोट लगी है। आडवाणी के इस विचार से बहुत से राजनेता, न्यायाधीश और विचारक सहमत हैं कि प्रधानमंत्री की सलाह पर राष्ट्रपति द्वारा चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति जनता के विश्वास पर खरी नहीं उतरती। निर्वाचन प्रक्रिया की निगरानी की संवैधानिक जिम्मेदारी रखने वाले चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति की यह विशुद्ध पक्षपाती व्यवस्था खुद अपने आप में लोकतांत्रिक मूल्यों के खिलाफ है। इसीलिए चुनाव की इस प्रक्रिया ने बहुत से ऐसे नागरिकों का रोष भड़काया है जो निर्वाचन प्रक्रिया को निष्पक्ष, विश्वसनीय और स्वतंत्र देखना चाहते हैं।

**सुझाव न मानने की आदत**

**• प्रमुख संवैधानिक पदों पर नियुक्ति प्रक्रिया के संबंध में अच्छे सुझावों की अनदेखी संप्रग सरकार ने पहली बार नहीं की है और न ही यह आखिरी बार हुआ है**

दो महत्वपूर्ण आयोगों ने सुझाव दिया है कि देश में राजनीतिक विविधता को प्रतिबिंबित करने वाली एक व्यापक समिति का गठन किया जाए, जो मुख्य चुनाव आयुक्तों और चुनाव आयुक्तों को नियुक्त करे। प्रख्यात न्यायविद एमएन वेंकटचलैया की अध्यक्षता वाले आयोग -नेशनल कमीशन टु रिव्यू द वर्किंग ऑफ द कंसटीट्यूशन (एनसीआरडब्ल्यूसी) ने सुझाव दिया है कि चुनाव आयुक्तों और मुख्य चुनाव आयुक्त की नियुक्ति एक ऐसी इकाई करे जिसमें प्रधानमंत्री, राज्यसभा में विपक्ष के नेता, लोकसभा में विपक्ष के नेता, लोकसभा स्पीकर और राज्यसभा के उपसभापति शामिल हों। थोड़े से अंतर के साथ इसी प्रकार के विचार दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग (एआरसी) के भी हैं। इसके अनुसार मुख्य चुनाव आयुक्त और चुनाव आयुक्तों को चुनने वाले कोलेजियम की अध्यक्षता प्रधानमंत्री करें और लोकसभा के स्पीकर, लोकसभा में विपक्ष के नेता, कानून मंत्री और राज्यसभा के उपसभापति इसके सदस्य हों। जब पिछले दिनों लालकृष्ण आडवाणी ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखा तो वह इन दो महत्वपूर्ण आयोगों की सिफारिशों को ही प्रतिध्वनित कर रहे थे, किंतु सरकार ने आडवाणी की सलाह को अनसुना करते हुए संपत को मुख्य चुनाव आयुक्त नियुक्त कर दिया। प्रमुख संवैधानिक पदों पर चुनाव प्रक्रिया के संबंध में अच्छे सुझावों की अनदेखी सरकार ने पहली बार नहीं की है और न ही यह आखिरी बार हुआ है। मनमोहन सिंह और पी. चिदंबरम ने दो साल पहले जबरदस्त गैरजिम्मेदारी का परिचय दिया था, जब उन्होंने भ्रष्टाचार के आरोपी पीजे थॉमस को मुख्य सतर्कता आयुक्त के रूप में नियुक्त किया था। उन्होंने यह फैसला लोकसभा में नेता प्रतिपक्ष सुषमा स्वराज की सलाह के विरुद्ध जाकर लिया था। यह नियुक्ति सुप्रीम कोर्ट द्वारा पीजे थॉमस को पद के अयोग्य ठहराने के बाद रद हुई।

यह मानना गलत है कि पीजे थॉमस प्रकरण और इस मामले में सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणियों ने संवैधानिक पदों पर नियुक्ति के दौरान सरकार को लोकतांत्रिक मानकों के प्रति जरूरी वचनबद्धता दर्शाने के लिए बाध्य किया होगा। मनमोहन सिंह और उनके मंत्रिमंडल से यह छोटी सी अपेक्षा करना भी बेमानी है। शायद अब वे मुख्य चुनाव आयुक्त और चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति में अधिक स्वीकार्यता और निष्पक्षता सुनिश्चित करने संबंधी उच्चतम न्यायालय के नए आदेश का इंतजार कर रहे हैं। तब तक वे पक्षपाती राजनीति का खेल खेलते रहेंगे और लोकतंत्र व लोकतांत्रिक संस्थानों का मखौल उड़ाते रहेंगे।

*(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं)*

*response@jagran.com*